भारत में संविधानवाद का मूल्यांकन

प्राप्तिः 01.11.25
स्वीकृतः 12.12.25

80

डॉ. व्रहमस्वरूप सिंह
सहायक आचार्य (अंग्रेजी विभाग)
संघटक राजकीय महाविद्यालय
सहसवान, बदांयू

डॉ. टेक चन्द
सहायक आचार्य (राजनीति विज्ञान विभाग)
संघटक राजकीय महाविद्यालय
सहसवान, बदांयू
ईमेलः tekchand.kumar389@gmail.com

सारांश

संविधानवाद में संविधान लिखित तथा संविधान पर आधारित एक ऐसी लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था होती है जिसमें संविधान सर्वोच्च होता है। लोकतांत्रिक मूल्यों और सिद्धान्तों को सुचारु रुप से क्रियान्वित करने के लिए सरकार की शक्तियों को संविधान द्वारा सीमित और नियंत्रित किया जाता है तथा राज्य द्वारा उसका पालन करना आवश्यक होता है। संविधान शक्ति पृथक्करण या शक्ति विभाजन के सिद्धान्त को अपना कर कार्यपालिका, विधायिका, और न्यायपालिका के मनमाने दुरुपयोग पर अंकुश लगाता है और विधि के शासन को बढ़ावा देता है, जिससे कि मानवधिकारों की रक्षा होती रहे। संविधानवाद में सरकार, विधानमंडल, संसद, न्यायपालिका, प्रशासनिक मशीनरी और नागरिकों सभी के कार्य, शक्तियां और अधिकार निर्धारित होते हैं, कोई भी अपनी मनमानी नहीं कर सकता। अगर कोई ऐसा करता है तो वह संविधान के विरुद्ध होगा जोकि संविधान, विधि या कानूनानुसार दन्डनीय होगा। संविधानवाद की अवधारणा यह है कि ''शासन किसी संविधान के तले का, उसके द्वारा क्रियान्वित हो जो स्वेच्छाचारी व प्राधिकारवादी शासन के विरुद्ध अनिवार्यतः सीमित प्रशासन व विधि के शासन की स्थापना करे। अनिवार्यत शासन लोकतांत्रिक शासन होता है'' डा0 एस.सी.कश्यप। ''संविधान कानूनों व नियमों का समुच्चय है जो किसी राज्य में सरकार के तंत्र की स्थापना करते हैं तथा जो शासन की विभिन्न संस्थाओं तथा क्षेत्रों ;जैसे कार्यपालिका, व्यवस्थापिका व न्यायपालिका, केन्द्रीय, प्रान्तीय व स्थानीय सरकारेंद्ध के बीच सम्बंधों को परिभाषित व निर्धारित करता है। वास्तव में संविधान विधिशास्त्र के फब्बारे का स्रोत है जिसमें से अन्य कानून निकलकर स्पष्ट व मधुर रुप में प्रवाहित होता है'' प्रोफे. एम.वी. पायली, सलेक्ट कांस्टीटूशन आफ दी वर्ल्ड पेज 08। डायसी के शब्दों में ''संविधान प्रत्यक्ष या परोक्ष रुप से राज्य की सर्वोच्च शक्ति के उपयोग को प्रभावित करता है।'' कार्ल जे. फ्रेडरिक ने कहा है ''शक्तियों का विभाजन करके

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2025.v16i04.80

संविधानवाद राज्य के सरकारी कार्यों पर प्रभावी प्रतिबंधों की पद्धति की व्यवस्था करता है। इसके अध्ययन में हमें उन विधियों और तकनीकों के बारे में अन्वेषण करना पड़ता है जिनसे ऐसे प्रतिबंधों को स्थापित किया तथा बनाये रखा जाता है। यह उन नियमों का समूह है जो निष्पक्ष व्यवहार को सुनिश्चित करते हैं और इस कारण सरकार उत्तरदायी बनती है।'' इस प्रकार संविधानवाद राज्य में संविधान के अस्तित्व का समर्थन करता है क्योंकि यह देश की सरकार का उपकरण अथवा बुनियादी नियम है जिसका उद्देश्य '' सरकार के मनमाने कार्यों को सीमित करना, शोषितों के अधिकारों को प्रतिभूति करना, और सर्वोच्च शक्ति के परिचालनों की परिभाषा करना है।'' विकिपीडियानुसार संविधनवाद का सामान्य अर्थ यह विचार है कि सरकार की सत्ता संविधान से उत्पन्न होती है तथा इसी से इसकी सीमा भी तय होती है। कौरी तथा अब्राहम का मत है कि ''स्थापित संविधान के निर्देशों के अनुरुप शासन को संविधानवाद माना जाता है'' सी. एफ. स्ट्रांग के शब्दों में ''उन सिद्धान्तों का ऐसा समूह जिनके अनुसार राज्य के अधिकारों, नागरिकों के अधिकारों और दोनों के सम्बंधों में सामंजस्य स्थापित किया जाता है'' पिनॉक और स्मिथ के अनुसार ''संविधानवाद केवल प्रक्रिया और तथ्य का नाम ही नहीं है, वरन् यह राजनीतिक शक्ति के संगठनों का प्रभावशाली नियंत्रण भी है एवं प्रतिनिधित्व की प्राचीन परम्पराओं और भविष्य की आशाओं का प्रतीक भी है।'' के.सी.व्हीयर ने संविधानवाद को अधिक स्पष्ट करते हुए लिखा है कि ''संविधानवादी शासन का अर्थ किसी संविधान के नियमों के अनुसार शासन चलाने से कुछ अधिक है। इसका अर्थ है, निरंकुश शासन के विपरीत नियमानुकूल शासन। संविधानवाद की वास्तविक सार्थकता और उसके पीछे मौलिक उद्देश्य यही है कि शासन की सीमाएं बांधी जा सकें और शासन चलाने वालों पर कानूनों तथा नियमों का बंधन रहे।''

मुख्य शब्द

संविधानवाद, सविधान, सर्वोपरी, पृथक्करण, विधि का शासन, समानता

संविधानवाद का विकास

यूनानी संविधानवाद : प्राचीन यूनान में नगर राज्य हुआ करते थे। प्लेटो और अरस्तू ने नैतिक दृष्टि से राजनीतिक संस्थाओं का अध्ययन किया था। प्लेटो ने 'अति मानव' की आवश्यकता पर जोर दिया, जबकि अरस्तू ने व्यावहारिक राज्य पर अपने विचार प्रकट किए। चूँकि प्लेटो और अरस्तू दोनों ही नगर राज्य की परिधि से बाहर नहीं निकल पाए जिसका परिणाम यह हुआ कि यूनानी संविधानवाद इतिहास की बदलती हुई परिस्थियों के साथ कदम मिलाकर नहीं चल सका।

रोमन संविधानवाद : रोमन के अधीन 'महान साम्राज्यवाद की स्थापना हुई। उन्होंने अपने कानून का संहिताकरण कर उत्तरदायी सरकार के सिद्धसन्तों का निर्धारण किया जिन्हें संविधानवाद के अत्यन्त लोकप्रिय सिद्धान्तों में शामिल किया जाने लगा।

मध्यकालीन संविधानवाद : मध्यकाल में प्रतिनिधि शासन का शुभारम्भ हुआ जो आधुनिक समय में प्रचलित अप्रत्यक्ष लोकतंत्र का आधार है। इसी युग का परिषदीय आन्दोलन संविधानवाद के विकास के लिए महत्वपूर्ण रहा है। जहां तक पुनर्जागरण और विश्व युद्धों के समय की बात की जाये

तो हम पाते है कि पुनर्जागरण के समय में राजनीति का नैतिकता से पृथक होना ही संविधानवाद का बीजारोपण था। तथा प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात राष्ट्र संघ जैसी संस्था का गठन होना भी संविधानवाद का उदय माना जाता है। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात दुनिया के सामने संविधानवाद का एक नया प्रतिरुप सामने आया जिसे साम्यवादी संविधानवाद कहकर संबोधित किया जाता है।

संविधानवाद की प्रमुख विशेषताऐं

1 लिखित संविधान : संविधानवाद की प्रथम विशेषता और शर्त होती है राज्य; और देश के संविधान का लिखित होना। संविधान किसी भी देश का वह आधार दस्तावेज होता है जिसमें भावी राज्य को मूर्तरुप देने वाले नियम व कायदे–कानून होते हैं। जैसे विधायिका, संसद और विधानमंडल, कार्यपालिका, सरकार, और न्यायपालिका, संघ और इकाईयों प्रान्तों या राज्यों के मध्य शक्ति या कार्यों का स्पष्ट विभाजन, संविधान की सर्वोच्चता, जनता सम्प्रभु और सत्ता का स्रोत होती है तथा संविधान द्वारा नागरिकों के अधिकार और कर्तव्य निर्धारित किये होते हैं। न्यायपालिका संविधान और नागरिक अधिकारों की रक्षक होती है।

2 संविधान की सर्वोच्चता : संविधानवाद की दूसरी प्रमुख विशेषता यह होती है कि इसमें संविधान राज्य का सर्वेच्च कानून व सभी संवैधानिक संस्थाओं की शक्ति का स्रोत होता है। संवैधानिक पद धारण करने वाला कोई भी व्यक्ति या संस्था यथा राष्ट्पति, प्रधानमंत्री, न्यायधीश, चुनाव आयुक्त, राज्यपाल व मुख्यमंत्री आदि संविधान से इत्तर कार्य नहीं कर सकता। सभी संवैधानिक पद धारक संविधान से बन्धे होते हैं और संविधान का पालन करने के लिए बाध्य होते हैं।

3 स्वतंत्र न्यायपालिका एवं न्यायिक पुर्नावलोकन : संविधानवाद की तीसरी प्रमुख विशेषता यह होती है कि जिस राज्य में संविधानवाद और संविधान होता है वहां न्यायपालिका स्वतंत्र होती है और उसे न्याायिक पुर्नावलोकन की शक्ति प्राप्त होती है। न्यायपालिका पर संवैधानिक और न्याायिक विषयों में कार्यपालिका और विधायिका का कोई दबाब या बंधन नहीं होता, वह विधायिका द्वारा बनाये जा रहे कानूनों और कार्यपालिका द्वारा कियान्वित किए जा रहे संवैधानिक, न्याायिक व नीतिगत कार्यों, फैसलों और विषयों की वैधता की जांच करने के लिए पूर्णतः स्वतंत्र होती है। न ही विधायिका और कार्यपालिका के पास ऐसा कोई अधिकार होता है कि वह न्यायपालिका के कार्यों और निर्णयों में किसी प्रकार का कोई हस्तक्षेप करें। अपितु संविधान द्वारा न्यायपालिका को यह अधिकार प्रदान किया जाता है कि वह विधायिका द्वारा निर्मित और कार्यपालिका द्वारा कियान्वित विधि और नीतियों संविधान के आधार पर परिक्षण करे तथा संविधान विरुद्ध पाये जाने पर उन्हे पूर्णतः या आंशिक रुप उसे असंवैधानिक घोषित कर निरस्त कर दे।

4 सीमित सरकार : सीमित सरकार से अभिप्राय है कि जिस राज्य में संविधानवाद होता है उस राज्य में कोई भी सरकार केन्द्र अथवा राज्य की वह संविधान की विधि और मर्यादाओं के अधीन होती है उस पर संविधान का अंकुश होता है, वह किसी भी प्रकार से निरंकुश या तानाशाह नहीं हो सकती। सीमित सरकार संविधानवाद और लोकतंत्र का प्रमुख अंग है। संविधानवादी व्यवस्था में सीमित सरकार का सिद्धान्त इसलिए अपनाया जाता है संवैधानिक पद धारण करने वाला व्यक्ति, नेता या संस्था अधिनायक बनकर संविधान, संवैधानिक विधि, संस्थाओं, मूल्यों, सिद्धान्तों और

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2025.v16i04.80

मानवाधिकारों का अतिक्रमण, हनन या उल्लंघन न करे। सरकार या सत्ता में शामिल लोग संवैधानिक नियमों से रहें किसी प्रकार वे अपने नीजि या व्यक्तिगत लाभ या स्वार्थ में सत्ता का दुरुपयोग न करें।

5 विधि का शासन : विधि का शासन ही संविधानवाद का मूल सूत्र है। जिस राज्य द्वारा संविधानादी व्यवस्था या शासन प्रणाली को अपनाया जाता है वहां संविधान लिखित होता है। चुंकि संविधान लिखित होता है इसलिए वहां विधि का शासन होता है। वहां संविधान और संवैधानिक विधि या कानून ही सर्वोच्च होता है। सभी संवैधानिक और गैर संवैधानिक संस्थाऐं और पद धारक विधि के अनुरुप ही अपने कार्यों का निर्वहन करते हैं, स्वेच्छाचारी या निरंकुश विचारों का संविधानवादी विधि के शासन में कोई स्थान प्रप्त नहीं होता। यहाँ संविधान, विधि या कानून ही सर्वोपरी होता है। यहां कानून के समक्ष शाषित और शासक दोनों समान होते हैं कोई श्रेष्ठ या निम्न नहीं होता। कानून सभी के अधिकारों को समान रुप से संरक्षण प्रदान करता है।

6 शक्ति पृथक्करण एवं शक्ति संतुलन : शक्ति पृथक्करण संविधानवाद और संविधान के प्रमुख सिद्धान्तों में निहित है। इस सिद्धान्त का प्रतिपादन मोंटेस्क्यू द्वारा अपनी कृति सेपरेशन ऑफ पावर में किया गया है, जिसका तात्पर्य होता है संविधान द्वारा निर्धारित शक्तियों का आवश्यकतानुसार सरकार के प्रमुख तीनों अंगों विधायिका, कार्यपालिका, और न्यायपालिका एवं के मध्य वितरण या विभाजन। इस सिद्धान्त के अनुसार संविधान द्वारा सरकार के सभी अंगों के अधिकार, शक्तियां और कार्य निर्धारित कर दिए जाते हैं जिससे की कोई भी अंग दूसरे अंग के अधिकार क्षेत्र में किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप न कर सके। संयुक्त राज्य अमेरिका और भारतीय संविधान के अध्ययन द्वारा शक्ति पृथक्करण व शक्ति संतुलन के सिद्धान्त को बड़ी आसानी से समझा और जाना जा सकता है। यहां संविधान की रक्षा का कार्य सर्वोच्च न्यायलय को सोंपा गया है। अगर विधायिका द्वारा ऐसा कोई कानून बनाया और कार्यपालिका द्वारा कियान्वित किया जाता है जो सविधान का उल्लंघन करता है या संविधान के विरुद्ध है तो उच्चतम न्यायलय को यह अधिकार प्राप्त है कि वह ऐसे कानून को पूर्णतः या अंशतः अवैध घोषित या रदद कर दे।

7 मानवाधिकारों का संरक्षण : संविधानवाद में मानवाधिकारों का स्पष्ट उल्लेख संविधान में ही कर दिया जाता है तथा न्यायपालिका को मानवाधिकारों की रक्षा की जिम्मेदारी और उत्तरदायित्व प्रदान किया जाता है। यदि किसी व्यक्ति विशेष, संस्था, या राज्य द्वारा संविधान में दिए गए मानवाधिकारों जिन्हें संविधान ने मौलिक अधिकार कहकर संबोधित किया है का उल्लंघन या हनन किया जाता है, तो न्यायपालिका उक्त व्यक्ति, संस्था या राज्य के विरुद्ध कानूनी और दन्डात्मक कार्यवाही कर सकती है, क्योंकि ये अधिकार संविधान द्वारा प्रत्याभूत किए गए होते हैं। यहां मानव जीवन, स्वतंत्रता, समानता व गरिमा को दृष्टि में रखकर संविधान की रचना की जाती है। व्यक्ति/मानव का लिंग, जाति, धर्म, भाषा या जन्मस्थान देखकर नहीं। संविधान और विधि के समक्ष राज्य के सभी मानव समान होते हैं और सभी को विधि का समान संरक्षण प्राप्त होता है।

8 निर्वाचन प्रणाली : लोकतंत्र का आधार चुनाव होता है और चुनाव का आधार संविधान। किसी भी लोकतांत्रिक देश में लोकतंत्र केवल तब तक स्वस्थ और जीवित रह सकता है जब तक कि वहां चुनाव संचालित कराने वाली संवैधानिक संस्था चुनाव आयोग निष्पक्ष, स्वतंत्र, व नियमित रुप से संविधान और संवैधानिक मूल्यों को साक्षी मानकर चुनाव सम्पन्न कराता है। अगर निर्वाचन आयोग निष्पक्ष और स्वतंत्र रुप से चुनाव कराने में असफल रहता है तो चुनाव जैसी पवित्र प्रकिया से जनता

का भरोसा या विस्वास खत्म हो जाता है। तथा ऐसे देश या राज्यों में तानाशाही और तानाशाह पैदा हो जाते हैं जिससे लोकतंत्र और संविधान दोनों खतरे में पड़ जाते हैं।

9 स्वतंत्र और निष्पक्ष मीडिया : मीडिया को लोकतंत्र का चतुर्थ स्तंभ कहा जाता है। लोकतंत्र और संविधानवादी राज्यों में मीडिया का सर्वप्रमुख कार्य लोकतंत्र और संविधान व संवैधानिक संस्थाओं के पक्ष में जनता को जागरुक कर जनमत तैयार करना होता है। अपितु मीडिया का कार्य विधायिका द्वारा बनाये जा रहे और सरकार या कार्यपालिका द्वारा क्रियान्वित किये जा रहे ऐसे कार्य जो संविधान की भावना के विरुद्ध है का विरोध कर उक्त दोनों से सवाल पूछना होता है। मीडिया की इस भूमिका से संविधान, लोकतंत्र और संवैधानिक संस्थाओं के प्रति जनता, नेताओं और प्रशासकों के मन में सम्मान और समर्पण का भाव पैदा होता है जिससे संविधान और लोकतंत्र चिरस्थाई बनता है।

10 जवाबदेही : चुंकि संविधानवाद का आधार संविधान होता है इसलिए संवैधानिक पद धारण करने वाला प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह शासक हो या प्रशासक या न्यायधीश वह जनता के प्रति जवाबदेह होता है। संवैधानिक पद धारण करने वाला व्यक्ति आधिकारिक और कार्यालयी कार्य करते समय अगर कोई गलती करता है तो उसे अपनी गलती की जिम्मेदारी लेनी होगी। ऐसा करने से सरकारी भ्रष्टाचार और लाल फीताशाही पर नियंत्रण स्थापित होता है।

भारत में संविधानवाद का मूल्यांकन : भारत में संविधानवाद और भारतीय संविधान का अध्ययन करने पर हमें ज्ञात होता कि भारतीय संविधान में संविधान निर्माताओं द्वारा संविधानवाद के सभी श्रेष्ठ गुण उपबंधित किए गये हैं। जिनका संविधानवाद की विशेषताएं के तहत उल्लेख किया गया है। जैसे लिखित संविधान, संविधान की सर्वोच्चता, स्वतंत्र न्यायपालिका एवं न्यायपालिका की न्यायिक पुर्नावलोकन की शक्ति, सीमित सरकार, विधि का शासन, शक्ति पृथक्करण एवं शक्ति संतुलन का सिद्धान्त, मानवाधिकारों का संरक्षण, निर्वाचन प्रक्रिया, एवं जवाबदेही आदि। अध्ययन से हमें यह ज्ञात हुआ कि संघ या केन्द्र व राज्य सरकारों द्वारा संविधान का न सिर्फ उल्लंघन किया अपितु उसे नकारा भी गया है। स्वतंत्र भारत का अतीत बड़ी स्पष्ट से यह बताता है कि 1952 से लेकर अब तक अनेकों बार केन्द्र सरकार द्वारा अनुच्छेद 356 का सहारा लेकर विपक्ष की राज्य सरकारों को विद्वेष के कारण गलत तरीके से वर्खास्त किया जाता रहा है। अध्ययन से हमें यह भी ज्ञात होता है कि केन्द्र की कांग्रेस सरकार द्वारा अनुच्छेद 352 का सहारा लेकर अपने राजनीतिक लाभ के लिए इस देश पर वर्ष 1975 में आपातकाल भी थोपा गया है। वर्तमान सत्ताधारी भारतीय जनता पार्टी और उसके के अलग अलग मंत्रियों और नेताओं यथा कर्नाटक से छह बार के सांसद अनन्त हेगड़े, तेलंगाना से धर्मपुरी अरविन्द, लल्लू सिंह व ज्योती मिर्धा राजस्थान द्वारा सार्वजनिक मंचों से बार बार भारतीय संविधान को बदलने की बात कही जाती रही है। इतना ही नहीं कुछ राज्यों की सरकारों द्वारा सर्वोच्च न्यायलय के आदेशों की अवमानना कर राजनीतिक लाभ के लिए अपने राजनीतिक प्रतिद्वन्दियों के घरों पर बुलडोजर की कार्यवाही की जा रही है तथा केंद्र और कुछ राज्य सरकारें जिस प्रकार धर्म का प्रतिस्थान कर रही है उससे यह भान होता है कि इन लोगों को देश के संविधान और उसकी सर्वोच्चता में बिलकुल भी विस्वास नहीं है, क्योंकि संविधान में राज्य के धर्म निरपेक्षता रहने की व्यवस्था की गयी है। भारत निर्वाचन आयोग पर जिस प्रकार केन्द्र सरकार पक्ष में चुनाव कराने के गंभीर आरोप लगाये जा रहे है और जिस प्रकार सत्ता के पक्ष में चुनाव

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2025.v16i04.80

परिणाम आ रहे हैं तथा चुनाव आयोग सवाल करने वाले लोगों के सवालों का संतोषजनक जबाब देने की बजाय इधर उधर की दलीलें दे रहा है। उससे ऐसा मेहसूस होता है कि इस समय केन्द्रीय चुनाव आयोग निष्पक्ष और स्वतंत्र नहीं है जोकि संविधान और लोकतंत्र के लिए शुभ नहीं है। इसलिए कभी कभी ऐसा प्रतीत होता है कि देश में संविधान और संविधानवाद नहीं है। इतना ही नहीं जिस प्रकार समय समय पर उच्चतम न्यायलय के मुख्य न्यायधीश रंजन गोगोई जब सार्वजनिक रुप से मीडिया के समक्ष आकर ये कहते हैं कि लोकतंत्र खतरे में है, और फिर वही बी.जे.पी. की सदस्यता ग्रहण कर राज्य सभा की सदस्यता हासिल कर लेते हैं। तथा जिस प्रकार उच्चतम न्यायलय के मुख्य न्यायधीश डी.वाई. चन्द्रचूड़ जी के घर से प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी जी की पूजा करते हुए तस्वीर जनता के सामने आती है वह देश की जनता को यह एहसास दिलाती है कि अब भारत का उच्चतम न्यायलय कार्यपालिका के साथ गठजोड़ कर उसके दबाब में कार्य कर रहा है। संसद और राज्य विधानमंडलों में जिस मात्रा और गति में बलात्कारियों, हत्यारों, भ्रष्टाचारियों का प्रवेश हो रहा है उससे लगता है हमारे यहां विधि का शासन है भी या नहीं । केन्द्र की सरकारों द्वारा राज्यों की सरकारों के अधिकारों का अतिक्रमण किया जाता है और रहा है वह भी गंभीर सवाल खड़ा करता है। शायद इसीलिए संविधान के जानकारों ने भारत के संविधान के विषय में निम्न विचार प्रकट किये हैं।

भारत के संविधान पर अलग–अलग विचारकों ने अलग–अलग विचार और तर्क प्रकट किए हैं। जोकि उनके भारतीय संविधान को देखने और समझने के दर्षष्टिकोंण पर निर्भर करता है। के. सी. व्हेयर ने भारतीय संविधान को अर्ध–संघीय कहकर पुकारा है और तर्क दिया है कि इसमें संघीय और एकात्मक दोनों की विशेषता है। जबकि ग्रेनविल आस्टिन ने इसे सहकारी संघवाद के रुप में वर्णित किया है और तर्क दिया है कि इसमें केंद्र और राज्य दोनों मिलकर कार्य करते हैं। मौरिस जोंस ने भारतीय संविधान को सौदेबाजी या सौदाकारी का संघवाद की संज्ञा दी है।

संदर्भ

1. प्रोफेसर एम. वी. पायली : सेलेक्ट कॉन्स्टीटयूशन ऑफ दि वर्ल्ड, 1934, यूनीवर्सल लॉ पब्लिकेशन थर्ड एडीशन 1912, पृ० सं०–**08.**
2. डॉक्टर एस. सी. कश्यप : अवर कॉन्स्टीटयूशः एन इन्ट्रोडक्शन टू इन्डियन कॉन्स्टीटयूशन 2021, एन.बी.टी., नयी दिल्ली, 1994, पृ० सं०–**02.**
3. कार्ल जे. फ्रेडरिच : कॉन्स्टीटयूशनल गवर्न्मेंट एन्ड डेमोक्रेसी, कोलकाताः ऑक्सफॉर्ड एन्ड आई.बी.एच. 1964, पृ० सं०–**25**.
4. के.सी.व्हीयर : मॉडर्न कॉन्स्टीटयूशन, लंदनः ऑक्सफॉर्ड यूनीवर्सीटीप्रेस, 1956, पृ० सं०–**01**, **137.**
5. ए.वी. डायसी : लॉ ऑफ कॉन्स्टीटयूशन, लंदनः जॉर्ज एलेन एन्ड अनवीन 1885, पृ० सं०–**23**.
6. पिनॉक एन्ड स्मिथ : पॉलीटिकल साइन्स एन इन्ट्रोडक्शन, पृ० सं०–**239.**
7. कॉरी एन्ड हेनरी जे अब्राहम : एलीमेंटस ऑफ डेमोग्राफिक गवर्नमेंट, पृ० सं०–**52**.
8. चदन कुमार जजवाड़े : बी.बी.सी. संवददाता, दिल्ली, बी.बी.सी. डॉट कॉम
9. द वायर हिन्दी डॉट कॉम, 04 जून 2024.
10. इन्डियन नेसनल कॉग्रेस, 07 मई 2024.